भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका
वर्ष 12 अंक 1 जून 2004 पृ. 116-118

जैव-प्रौद्योगिकी द्वारा शुष्क-क्षेत्रों के जैव संसाधनों का सुधार और पौधों के रोगों का नियंत्रण

आर राज भंसाली
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

सारांशः थार रेगिस्तान में जैव प्रौद्योगिकी अनुसंधान को यहां के किसान, पशु, पौधों, जमीन, जल व जलवायु से जोड़ा जा सकता है, लेकिन शुष्क क्षेत्र की जमीन अधिकतर बंजर व रेतीली है जहां पानी व वर्षा की कमी से वातावरण शुष्क व गर्म हो जाता है। कम वर्षा व निरंतर अकाल से यहां के जैव संसाधनों पर बहुत बुरा असर पड़ा है। मौसम विभाग ने वर्ष 2002 को इन्हीं कारणों से अखिल भारतीय सूखा वर्ष घोषित किया था। इसी वर्ष राजस्थान में सामान्य वर्षों से 64 % वर्षा कम हुई। इसमें पश्चिम राजस्थान की स्थिति अत्यधिक विकट हो गई थी। इन्हीं कारणों से हमारे बहुमूल्य जैव संसाधनों की अत्यधिक क्षति हुई। इन बुरे दिनों का दौर खत्म करने में वैज्ञानिकों के अनुसंधानों द्वारा पर्यावरण, फसलों व पेड़ पौधों में सुधार कर उनको सुरक्षित किया जा सकता है। इस दिशा में काजरी के जैव वैज्ञानिक निरंतर कार्यरत हैं व आशान्वित हैं कि यदि नतीजे उम्मीद पर खरे उतरे तो वह दिन बहुत दूर नहीं जब कि फिर से इस रेगिस्तान को हरा भरा व जैव संसाधनों से प्रचुर किया जा सकेगा।

प्रस्तावना

तेजगति से बढ़ती हुई जनसंख्या हेतु खाद्यान्न आपूर्ति न्यूनतम समय में जैव प्रौद्योगिकी द्वारा अब संभव है। जैव प्रौद्योगिकी में नवीनतम जैव तकनीकों द्वारा ऐसे जैव प्रकारों एवं तन्त्रों का निर्माण किया जाता है जो पर्यावरण सन्तुलन बनाये रखते हुऐ समस्त मानव व सजीवों के लिये लाभप्रद हो सके। इस नई प्रौद्योगिकी के प्रमुख कार्य क्षेत्र हैं: 1. आनुवंशिकी अभियान्त्रिकी, 2. कोशिका संयोजन, 3. ऊतक संवर्धन, 4. किण्वक अभियान्त्रिकी, 5. असंक्रम्यता विज्ञान एवं 6. जैविक नियंत्रण।

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर इन नवीन जैव तकनीकों का रुक्ष कृषि में उपयोग करने में एक अग्रणी संस्थान है। यह पश्चिमी राजस्थान क्षेत्र कालान्तर से प्रतिकूल वातावरण, उष्ण जलवायु, वर्षा की कमी तथा अनिश्चितता व रोगों के प्रकोप के कारणों से सूखे से ग्रस्त रहा है। जिससे इस क्षेत्र का बड़ा भाग रेगिस्तान में परिवर्तित हो गया है। जिससे बहुसंख्या में पेड़ पौधे व जीव जन्तु कम हो गये हैं साथ ही कुछ अच्छे गुणों वाली प्रजातियां लुप्त होने की स्थिति में हैं। यह संस्थान प्रमुख रूप से जैव प्रौद्योगिकी का उपयोग रोग प्रतिरोधी प्रजातियों का कोशिका स्तर पर चयन करके, उन्हें बहुसंख्या में विकसित करने, पौधों की सहिष्णु क्षमता को प्रेरित कर नवीन पौधों को बहुसंख्या में गुणित करने की विधि विकसित करने में लगा है।

पिछले कुछ वर्षों से जैव प्रौद्योगिकी पौधों की नयी तथा उच्च किस्में विकसित करने का प्रमुख स्रोत बन गयी है। इस टेक्नोलॉजी की यह विशेषता है कि नयी किस्म के अधिक से अधिक पौधे कम समय में विकसित किये जा सकते हैं। मरु क्षेत्र में ऐसी उन्नत किस्म के पौधों की अत्यन्त आवश्यकता है जिनमें कीड़ों व बीमारियों को सहन करने की क्षमता हो तथा वे रेगिस्तान के उच्च तापमान व कम नमी में पनप सकें एवं लवणीय व क्षारीय मिट्टी में अच्छा उत्पादन कर सकें। इस तकनीक से कोशिका स्तर पर ही अच्छे गुणों वाली किस्मों का चयन करना संभव हो गया है। लुप्त होने वाली कई मूल्यवान किस्मों को संरक्षित एवं पुनर्जीवित किया जा सकता है।

बेर, अनार व खजूर का सूक्ष्मप्रवर्धन

चुनिन्दा फल व लकड़ी देने वाले वृक्षों का बहुसंख्या में उत्पादन करना इस संस्थान का प्रमुख लक्ष्य है। इस श्रेणी में बेर, अनार, खजूर, खेजड़ी व रोहिड़ा अग्रणी हैं। इस संस्थान के वैज्ञानिकों ने ऊतक संवर्धन व कोशिका संवर्धन विधि द्वारा रुक्ष फलों जैसे खजूर की परखनलियों में ज्यादा संख्या में उत्पादन की तकनीक विकसित की है। जिससे निरंतर आवृत्तीय कायिक भ्रूणोत्पत्ति (repetitive somatic embryogenesis) द्वारा उत्पादन किया जा सकता है। रोहिड़ा व खेजड़ी रुक्ष वानिकी के अत्यन्त उपयोगी वृक्ष हैं। खेजड़ी का हर भाग व रोहिड़े की मूल्यवान लकड़ी बहुत ही उपयोगी होती है। इन चयनित पेड़ों को संरक्षित व कई गुना मानक जैव विधियों से बढ़ाया जा रहा है।

खेजड़ी - थार रेगिस्तान का कल्पतरु

खेजड़ी मरु प्रदेश और उसके वाशिदों के लिये वरदान है। प्रतिकूल वातावरण उष्ण जलवायु और वर्षा की अनिश्चितता और कई साल के निरन्तर अकाल सूखे की स्थिति के पश्चात् भी यहां के वाशिंदों तथा पशुओं, बकरी, भेड़ और ऊंट आदि के जीवन की मूलभूत आवश्यकताएं पूर्ण करने की क्षमता रखने वाला एक बहुउपयोगी वृक्ष है। इस वृक्ष के कच्चे फल सांगरियां सब्जी हेतु तथा पके हुए फल खोखा बच्चों आदि के खाने हेतु उपयोगी होते हैं एवं इसकी सूखी पत्तियां पशुओं के लिए पर्याप्त प्रोटीन उपलब्ध कराते हैं। खेजड़ी के पके हुए फल तथा सूखी पत्तियों में 15 % तक प्रोटीन पायी जाती है। पके हुए फलों को खाने से मरु प्रदेश के बच्चों में कुपोषण से उत्पन्न होने वाली व्याधियां भी नहीं होती हैं। इससे प्रति पेड़ लगभग 3-4 Q लकड़ी काष्ठ व 2-9 kg बीज प्राप्त होते हैं।

खेजड़ी राजस्थान में कल्पतरु के नाम से भी विख्यात है। इस वृक्ष के कारण ही जोधपुर के पास के गांव का नाम खेजड़ली पड़ा जहां पर इसकी कटाई रोकने हेतु लगभग 390 स्त्री, पुरुषों और बच्चों ने अपने प्राणों की आहुति दी थी। तब काष्ठ के लिए इसके जीवित वृक्ष की कटाई

मना की गई थी तथा विश्नोई समाज में इसकी पूजा का प्रचलन भी सुविख्यात है।

पशुओं के खाने के लिए खेजड़ी की शाखाओं की कटाई तथा कच्चे पके फलों के मानव द्वारा उपयोग के कारण इसके बीज कम मात्रा में ही उपलब्ध हो पाते हैं। इसके बीजों का अंकुरण भी सांद्र अम्ल की क्रिया करवाने के पश्चात् ही सम्भव होता है तथा बीजों की अंकुरण क्षमता का प्रतिशत समय के अन्तराल के कारण भी कम हो जाता है। खेजड़ी के एक ही वृक्ष के बीजों के अंकुरण और वृद्धि का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि वंशानुगत विभिन्नता की मात्रा अत्यधिक है अर्थात् एक ही वृक्ष के बीजों से उत्पन्न हुए पौधों में एकरूपता या समानता नहीं होती है।

इन उपरोक्त तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए यह नितान्त आवश्यक हो जाता है कि खेजड़ी के अधिक से अधिक एकरूप वृक्ष उत्पन्न किये जाएं। काजरी, जोधपुर के वैज्ञानिकों के शोध कार्यों से परखनली में उन्नत किस्म के खेजड़ी के पौधों को विकसित करने में सफलता मिली है।

रोहिड़ा व खेजड़ी की ऊतक संवर्धन तकनीक

ऊतक संर्वधन विधि (tissue culture) द्वारा इसके उन्नत वृक्ष की मई से सितम्बर माह में उत्पन्न हुई नई शाखाओं के 15-20 mm के आंख सहित हिस्से काटकर पानी से अच्छी प्रकार से धोकर उन्हें 0.1 % मरक्यूरिक क्लोराइड के घोल में 3-5 min तक रखने के पश्चात् असांमित वातावरण में निसंक्रमित परिशुद्ध जल से तीन चार बार धोकर स्थानान्तरण की क्रिया द्वारा मुराशिगे और स्कूग 1962 के पादप व द्विकारक यौगिकों के संवर्धन माध्यम (medium) में कुछ परिवर्तन कर प्रतिस्थापित करने के एक सप्ताह में ही शत-प्रतिशत आंखों को नई शाखाओं में परिवर्तित किया जा सकता है, तत्पश्चात् इन नई शाखाओं को काटकर जड़ें उत्पन्न करने वाले पादप व द्विकारक संवर्धक रासायनिक तत्व हारमोन्स वाले संवर्धन माध्यम में प्रतिस्थापित करने के तीन-चार सप्ताह पश्चात् ही इन नई शाखाओं में से 80 प्रतिशत पूर्ण रूप से विकसित जड़ें उत्पन्न हो जाती हैं।

इस एक माह की अवधि में जड़ों के विकास के साथ-साथ ही नई शाखाओं की लम्बाई में भी निरन्तर वृद्धि होती रहती है। इसलिए एक या दो आंखों वाले जड़ों के हिस्सों को छोड़कर ऊपरी नई शाखाओं के 15-20 mm के एक ऑख सहित अलग-अलग हिस्से काटकर फिर से जड़ उत्पन्न करने वाले पादप व द्विकारक संवर्धक रासायनिक तत्व हारमोन्स वाले संवर्धन माध्यम में प्रतिस्थापित कर देते हैं। इस प्रकार से उन्नत किस्म के तथा एकरूपता वाले पौधों की उत्पति की प्रक्रिया अबाधित रूप से निरन्तर चलती रहती है।

इस विधि की सफलता के लिए 28 से 30°C तापमान और 16 hr प्रतिदिन कृत्रिम रोशनी का वातावरण आवश्यक है। पूर्ण रूप से विकसित पौधों को पौध संरक्षक रसायनों के घोल में 3-5 min तक रखने के पश्चात् परिशुद्ध जल से धोकर मिट्टी के छोटे गमलों में रेत, खाद और चिकनी मिट्टी के समान अनुपात वाले सम्मिश्रण में रोपित कर परिशुद्ध जल को आवश्यकतानुसार डालते रहते हैं तथा पौधों को कांच के बर्तन से ढक देते हैं ताकि नमी का अनुकूल वातावरण बना रहे। नई पत्तियों के प्रस्फुटन के पश्चात् इन पौधों को खेत में स्थायी रूप से प्रतिरोपित कर सकते हैं। मरु क्षेत्रों के किसानों को उन्नत किस्म के खेजड़ी के वृक्ष इस प्रकार परखनली में विकसित कर शीघ्र उपलब्ध कराने के लिए काजरी के वैज्ञानिक प्रयासरत हैं।

खेजड़ी रोगों का जैविक नियंत्रण

अकाल के साथ यहां की जमीन में पनपने वाले भूमिगत रोग व कीटों के आक्रमण से खेजड़ी, बबूल व सरेश के पेड़ सूखने लगे हैं। खासकर मरु प्रदेश का कल्पवृक्ष 'खेजड़ी' व बबूल पर सबसे बुरा असर पड़ा है। अनुमान है कि आने वाले 5 सालों में 25-30 % खेजड़ी सूखा रोग से लुप्त हो जायेगी। लगातार आकाल से इन वानस्पतिक संसाधनों की स्थिति सबसे विकट व भयावह हो गई है। इन पेड़ों के सूखने में *गेनोडर्मा ल्यूसीडम* नाम की कवक का काफी हद तक योगदान रहा है। यह कवक जड़ों व तने के निचले हिस्से पर लगती है और बिना कोई लक्षण प्रकट किये कुछ ही साल में खेजड़ी को सुखा देती है। इस क्षेत्र में हर तीन साल में अकाल व कम वर्षा होती रहती है। इससे भी खेजड़ी का सूखना होता रहता है। इसलिये यह पता लगाना अत्यधिक मु शिकल है कि खेजड़ी के सूखने का कारण अकाल है या फफूंद का आक्रमण। कृषि वैज्ञानिकों ने प्रयास कर मित्र फफूँद *ट्राइकोडर्मा* व भूमि में उपस्थित अन्य मित्र कवकों का चयन, बहुसंख्या में उत्पादन करने में सफलता प्राप्त की है। *ट्राइकोडर्मा सूडोकोन्नगी* नामक कवक से खेजड़ी को सूखने से बचाया जा सकता है। यह फफूंद विभिन्न फसलों में नुकसानदायक भूमि जनित कवक रोगों जैसे जड़ गलन, उखटा, तना गलन, झुलसा व अन्य रोगों के जैव नियन्त्रण में प्रभावी है।

इन मित्र फफूंदों से फफूँदनाशी रसायनों के अनियंत्रित एवं अविवेकी प्रयोग से वातावरण दूषित होने, खाद्य पदार्थों पर हानिकारक अवशेष मिलने, मित्र फफूंदों का विनाश होने तथा फफूंदनाशियों के प्रति प्रतिरोधकता उत्पन्न होने की संभावनाओं से बचा जा सकता है। मित्र फफूंद अत्यधिक प्राकृतिक, रसायनरहित व प्रभावशाली है। इस प्रकार से कृषि जैवप्रद्योगिकी रेगिस्तान को फिर से हरा भरा व जैव संसाधनों से सम्पन्न करने में ऊतक संवर्धन व जैविक नियन्त्रण प्रभावी बन सकते हैं। अब जेनेटिक इन्जीनियरिंग द्वारा एक पेड़ के जीनों को दूसरे पेड़ की कोशिका में सुलभ तरीके से प्रत्यारोपित किया जा सकता है जिससे मनवांछित पौधों का उत्पादन किया जा सकेगा। जैव प्रौद्योगिकी के इन सर्वोत्तम गुणों से ऐसा प्रतीत होता है कि वह दिन दूर नहीं जब वैज्ञानिक ऐसी जैव तकनीकों का विकास करके इस मरु क्षेत्र को पुनः पेड़ पौधों से हरा भरा कर पाएंगे।

संदर्भ

1. भास्करन एस एवं स्मिथ आर एच, सोमेटिक एम्ब्रियोजेनेसिस फ्राम शूट टिप एंड इम्मैच्योर इनफ्लोरेसेंस ऑफ *फीनिक्स डेक्टिलिफेरा* सीवी वारही, *प्लांट सेल रिपोर्ट*, **12** (1992) 22-25.
2. दास एच सी, कौल आर के, जोशी एस पी एवं राज भंसाली आर, इन विट्रो प्रोपेगेशन ऑफ *फीनिक्स डेक्टिलिफेरा* एल., *करेंट साइंस*, **58** (1989) 22-24.
3. मातर ए ए, *इन विट्रो* प्रोपेगेशन ऑफ *फीनिक्स डेक्टिलिफेरा* एल., *डेट पाम जर्नल*, **4** (1986) 137-151.
4. राज भंसाली आर, कौल आर के एवं दास एच सी, मास क्लोनिंग ऑफ डेट पाम प्लांटलेट्स थ्रू रिपीटीटिव सोमेटिक एम्ब्रियोजेनेसिस, *जर्नल प्लांट एनाटमी मॉरफोलॉजी*, **5** (1988) 73-79.
5. राज भंसाली आर एवं कौल आर के, इनटू फ्यूचर-डेट थ्रू टिशू कल्चर, इण्डियन हॉर्टीकल्चर, (1991) 7-10.

6. राज भंसाली आर, माइक्रोप्रोपेगेशन ऑफ टेम्परेट एंड ट्रॉपिकल फ्रूट ट्रीज थ्रू सोमेटिक एम्ब्रियोजेनेसिस, इनः एडवान्सेस इन प्लांट टिशू कल्चर इन इण्डियाः प्रोसीडिंग्स XII प्लांट टिशू कॉन्फ्रेन्स, सं. : पी टंडन, अध्याय 13.
7. राज भंसाली आर एवं सिंह एम, माइक्रोप्रोपेगेशन ऑफ एरिड जोन फ्रूट्स ट्रीज़ ऑफ इण्डिया, इनः माइक्रोप्रोपेगेशन ऑफ वुडी ट्रीज़ एंड फ्रूट्स (सं.: एस मोहन जैन एवं के इशी), क्लुवर, अध्याय 13.
8. राज भंसाली आर, माइक्रोप्रोपेगेशन ऑफ डेट पाम थ्रू रिपीटीटिव सोमेटिक एम्ब्रियोजेनेसिस प्रोसेस (सं.: वी वी एस कपूर एवं एन के खटर), मधु पब्लिकेशन्स, बीकानेर, भारत, (2003) 223-228.
9. राज भंसाली आर, *इन विट्रो* मल्टीप्लीकेशन ऑफ इम्पॉर्टेन्ट डेजर्ट ट्रीज, इनः ह्यूमन इम्पैक्ट ऑन डेजर्ट एन्वायरनमेंट (सं.: प्रताप नारायन, एस काथ्जू, अमल कार, एम पी सिंह एवं प्रवीन कुमार), एरिड जोन रिसर्च एसोसिएशन ऑफ इण्डिया, जोधपुर एवं साईंटिफिक पब्लिशर्स, (भारत), जोधपुर, (2003अ) पृष्ठ 404-410.
10. रेनॉल्ड्स जे एफ एवं मुराशिगे टी, एसैक्चुअल एम्ब्रियोजेनेसिस इन कैलस कल्चर्स ऑफ पाम्स, *इन विट्रो सैल डिवेलपमेंट बायोलॉजी*, **15** (1979) 383-387.
11. शर्मा डी आर, दीपक एस एवं चौधरी जे वी, रीजेनेरेशन ऑफ प्लांटलेट्स फ्राम सोमेटिक टिश्यूज ऑफ डेट पाम *फीनिक्स डेक्टिलिफेरा* लिन., *इण्डियन जर्नल ऑफ एक्सपेरिमेंटल बायोलॉजी*, **24** (1986) 763-766.
12. टिसीरत बी, फोस्टर जी एवं डी मेसन डी, प्लांटलेट प्रोडक्शन इन विट्रो फ्राम *फीनिक्स डेक्टिलिफेरा* लिन., *डेट्स ग्रोअर्स रिपोर्ट*, **54** (1979) 19-23.